इकाई 8 हिन्द महासागर व्यापारिक संजाल*

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 हिन्द महासागर का व्यापारिक संजाल

8.3 यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियाँ

8.3.1 पुर्तगाली

8.3.2 अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी

8.3.3 डच ईस्ट इंडिया कम्पनी, वेरेनिगडे ऑस्टिनडिश कोम्पैनी (वी ओ सी)

8.3.4 फ्रांसिसी ईस्ट इंडिया कम्पनी

8.4 सत्रहवीं शताब्दी में व्यापारिक संजाल में बदलाव

8.5 यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियाँ और उपमहाद्वीप की राजनैतिक शक्तियाँ

8.6 यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियाँ और देसी व्यापारिक समूह

8.7 हिन्द महासागर में व्यापार का बदलता स्वरूप

8.8 सारांश

8.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह समझ सकेंगे:

- हिन्द महासागर में व्यापारिक संजाल का स्वरूप;
- हिन्द महासागर में यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों की भूमिका;
- यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों के आगमन से व्यापार का बदलता स्वरूप;
- भारत में राजनीतिक शक्तियों और यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों के बीच संबंध; और
- इस अवधि के दौरान किन विभिन्न वस्तुओं का व्यापार किया जा रहा था।

8.1 प्रस्तावना

हिन्द महासागर के व्यापारिक संजाल में अपनी सामरिक स्थिति के साथ भारत समुद्री संजाल के सबसे महत्वपूर्ण केन्द्रों में से एक बन गया था। भारतीय व्यापारी अपनी उद्यमशीलता के लिए जाने जाते थे और उन्हें एक सुव्यस्थित बैंकिंग प्रणाली की सुविधा प्राप्त थी। मुगल शासन ने शहरीकरण, व्यापार और वाणिज्य के विकास और विनिर्माण क्षेत्रों में योगदान

*डॉ. सोहिनी बसाक, स्वतंत्र शोधकर्ता, नई दिल्ली।

दिया। यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों के आगमन ने व्यापारिक परिपथ में बढ़ते तनाव और प्रतिस्पर्धा को जोड़ा। सोलहवीं, सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी के दौरान भारतीय सामुद्रिक व्यापारिक संजाल लगभग अपरिवर्तित रहा। हालाँकि, सोलहवीं शताब्दी की शुरुआत में यूरोपीय लोगों के एशियाई समुद्रों में आगमन ने पारंपरिक व्यापारिक संजाल में परिवर्तन किया। व्यापारिक संजाल के दो प्रमुख भाग लाल सागर और फारस की खाड़ी और चीन सागर और जापान तक दक्षिण–पूर्व एशिया थे। भारतीय व्यापारियों के संबंध न केवल भारत में बल्कि विदेशी भूमियों में भी मौजूद थे। प्राचीन काल से ही भारतीय व्यापारी दूर–दूर तक जाते थे। ज्यादातर व्यापारियों और वणिकों से युक्त भारतीय प्रवासी दक्षिण–पूर्व एशिया से अफ्रीका तक में पाए गए थे। यहाँ तक कि देश के भीतर भी व्यापारी और व्यवसायी लोगों द्वारा अक्सर व्यक्तिगत और पेशेवर आधार पर गठबंधन बनाए गए थे।

8.2 हिन्द महासागर का व्यापारिक संजाल

हिन्द सागर में वाणिज्यिक यातायात का इतिहास बहुत पुराने अतीत तक जाता है, और उत्पादन और विनिर्माण के विभिन्न केन्द्रों को जोड़ने वाले व्यापार के संजाल सामुद्रिक भारत के पूरे तट पर पाए गऐ हैं। पश्चिम एशिया और दक्षिण–पूर्व एशिया के बीच में अपनी भू–भौतिक स्थिति के सामरिक महत्व के कारण, लम्बी दूरी की वस्तुओं के व्यापार में भारत हमेशा एक बेहतर आर्थिक स्थिति में रहा। विविध फसल उत्पादन के साथ विशाल कृषि परिदृश्य के होने से, उपमहाद्वीप में अत्यधिक प्रतिस्पर्धा वाली कीमतों पर व्यापार योग्य वस्तुओं की एक विस्तृत संख्या को बाजार में लाने की अपार आर्थिक क्षमता थी। इनमें चावल, चीनी और तेल जैसे खाद्य पदार्थों के साथ–साथ कपास और नील जैसे कच्चे माल शामिल थे। इस व्यापार का बड़ा भाग तटीय था। विदेशी व्यापार के लिए आवश्यक जहाजी माल की नियमित आपूर्ति सुनिश्चित करने वाले आंतरिक क्षेत्रों के कारण विनिमय के प्रमुख सामुद्रिक केन्द्रों के आसपास क्षेत्रीय व्यापार के कई केन्द्रों का उद्‌भव हुआ।

सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी की शुरुआत में, विश्व व्यापार में अरब सागर का योगदान मुख्य रूप से सर्राफा, सोना, मोती, हीरे, काली मिर्च और कुछ हद तक रेशम पर केन्द्रित था (आर. जे. बरेंनडसे, *द इंडियन ओशन वर्ल्ड ऑफ द सेवन्टिथ सेन्चुरी*, एम. ई. शार्प, 2002)। निर्यात व्यापार का यूरोपीय हिस्सा निश्चित रूप से बड़ा था। भारत के वांछीय व्यापार के दो मुख्य संबंध थेः एक चीन और दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों से जुड़ा था और दूसरा पश्चिम एशिया और पूर्वी अफ्रीका के बन्दरगाहों से जुड़ा था। कूटो और अन्य समकालीन पुर्तगाली स्रोतों से यह स्पष्ट है कि खम्भात, सूरत और अन्य गुजराती बन्दरगाह, पुर्तगाली कार्टेज के साथ या उनके बिना, अटजेह और लाल सागर के साथ व्यापार से सीधे जुड़े हुए थे। सत्रहवीं शताब्दी में हिन्द महासागर व्यापार के विकास का एक अनिवार्य घटक कोरोमंडल तट और दक्षिण–पूर्व एशिया के बीच व्यापार का क्षेत्र था। यहाँ कोरोमंडल तट का प्रयोग दक्षिण में नागपटनम् से लेकर उत्तर में गंजम तक के भारत के पूर्वी तट के लिए किया गया है।

1511 से पहले मलक्का के सामुद्रिक व्यापार में गुजरातियों द्वारा निभाई गई भूमिका सर्वविदित है, और उस अवधि के दौरान, जिससे हमारा सरोकार है, अटजेह में उनकी उपस्थिति के कई बिखरे हुए संदर्भ हैं (सी. आर. बॉक्सर, ''ए नोट ऑन पोर्चुगिज रिएक्शन्स टु द रिवावल ऑफ द सी स्पाइस ट्रेड एंड द राइज ऑफ अटजेह, 1540–1600'', *जर्नल ऑफ साउथ ईस्ट एशियन हिस्ट्री*, वॉल्यूम–10 नम्बर 3, *इंटरनेशनल ट्रेड एंड पॉलिटिक्स इन साउथ ईस्ट एशिया 1500–1800* (दिसम्बर, 1969)।

गुजरात में निर्मित विभिन्न प्रकार के रेशम जैसे कैमलेट फारस और अरब को निर्यात किये जाते थे। दीव में कालीन और चित्रयवनिका का उत्पादन किया जाता था और कई प्रकार की वस्तुओं के साथ इनका विनिमय किया जाता था। अदन और मक्का से मूंगा, तांबा, पारा, सिंदूर, सीसा, फिटकरी, गुलाबजल, मजीठ (कालमेशी) और केसर भारत में आयात किये जाते थे। भारतीय अर्थव्यवस्था में विनिर्माण क्षेत्र के सबसे महत्वपूर्ण घटक वस्त्र थे। इसमें चित्रित या प्रिन्टिड मोटे सूती वस्त्रों से लेकर सबसे उत्तम ढाका की मलमल और गुजरात के सोने की कढ़ाई वाले वस्त्र थे। गुजरात से मक्का की यात्रा मुस्लिम जहाजों या पाँच सौ से हजार खांडियों की नाव में की जाती थी। उनमें काले कैनेक्विस, लिनन, कपास, कौड़ी, विभिन्न प्रकार के मसाले जैसे काली मिर्च, लौंग, इलायची, जायफल, दाल–चीनी आदि ले जाए जाते थे। वे मुख्य रूप से वेनेजियानोस नामक सोने के सिक्के, जो प्रत्येक बारह सौ रीस के बराबर थे; कॉफी, मूंगा, विभिन्न रंगों के कैमलेट, पारा, सिन्दूर और बिस्कुट के रूप में चाँदी वापिस लाते थे। बेहतर गुणवत्ता की अफीम अदन से आयात की जाती थी क्योंकि दीव में उगाई जाने वाली अफीम गुणवत्ता में निम्न स्तर की थी। सिक्कों और छड़ों के रूप में बड़ी मात्रा में सोना और चाँदी भी अरब के बन्दरगाहों से इस शहर में लाए जाते थे। गुजरात का होरभुज, शेहर और बारबारा और पूर्वी अफ्रीकी बन्दरगाहों मेलिन्डे और मोम्बासा के साथ भी गहरे व्यापारिक संबंध थे।

ऐसा प्रतीत होता है कि घोड़े मूल रूप से लाल सागर और फारस की खाड़ी के क्षेत्रों से लाए गये थे। घोड़ों को मस्कट से दीव भी लाया जाता था। ये अरबी घोड़े थे जिनकी 'योद्धा घोड़ों' के रूप में काफी माँग थी। साथ ही दीव के जहाज खम्भात से चमकीले काँच के टुकड़ों वाले वस्त्र जैसे उत्पादों को मुंज तक ले जाते थे। हालाँकि, खाड़ी के साथ संबंध काफी महत्वपूर्ण था क्योंकि यह चाँदी का एकमात्र एशियाई स्रोत था। तीन प्रमुख मार्ग थे जिनके माध्यम से चाँदी मुगल भू–भाग में प्रवेश करती थी, लाल सागर के बन्दरगाह, फारस की खाड़ी और केपमार्ग। इनमें से चाँदी के अधिकांश व्यापारिक मार्ग गुजरात और उत्तरी कोंकण के बन्दरगाहों पर मिलते थे, जहाँ से उन्हें सिक्के बनाने के लिए अहमदाबाद भेजा जाता था। इन व्यापारियों द्वारा पूर्वी अफ्रीका से हाथी दाँत, सोना और गुलाम और फारस की खाड़ी के बन्दरगाहों से लाई गई बहुमूल्य धातुओं ने गुजराती बन्दरगाहों के आसपास के क्षेत्रों को दासों के बाजार के अलावा, सर्राफा, व्यापार और हस्तशिल्प के प्रमुख केन्द्र के रूप में विकसित किया। कसीदाकारी के काम, नक्काशी, हाथी दाँत के काम, रत्नों की कटाई, सफाई और दक्कन से आने वाले बहुमूल्य रत्नों के प्रसंस्करण जैसे विशिष्ट गहन श्रम वाली वस्तुओं का निर्माण तटीय गुजरात के आसपास के क्षेत्रों में अभूतपूर्व तरीके से विकसित हुआ। सोने–चाँदी के अपार प्रवाह ने मुगलों को अहमदाबाद में अपना सर्वश्रेष्ठ टकसाल स्थापित करने के लिए प्रेरित किया। दीव के व्यापारियों ने कभी–कभी जहाजों

को कुंग और बसरा भेजा। मस्कट के व्यापार को भारतीय व्यापारियों के एक समूह द्वारा नियंत्रित किया जाता था, जो ज्यादातर दीव के कफोल बनिया और केरल के मापिला थे। कफोल बनिए जरीबा युद्ध बेडे और शहरी कुलीन से जुड़े थे और उन्हें करों से छूट दी जाती थी।

लाल सागर मार्ग गुजराती व्यापारियों के लिए, विशेष रूप से सूरत के लिए सबसे महत्वपूर्ण था। इस मार्ग में गुजराती और यूरोपीय लोगों के बीच प्रतिस्पर्धा 1620 और 1630 के बीच महसूस की गई थी और गुजरात के अकाल के बाद अधिक तेज हो गई, जब निर्यात के लिए वस्तुओं की आपूर्ति कभी–कभी बन्द हो जाती थी। भारत, ईरान, तुरान और अन्य पश्चिमी एशियाई क्षेत्रों के बीच सूरत से काफी मात्रा में व्यापार किया जाता था। अंग्रेजी अनुमान के अनुसार, 1661 में दस लाख रूपये मूल्य के भारतीय सूती वस्त्र सूरत से ईरान भेजे गये थे। यह संभव है कि इनमें से कुछ वस्त्रों को किर्मन या मशद के माध्यम से कारवाँ मार्ग से तुरान या पश्चिमी की ओर ओटोमन शहरों में भेज दिया गया हो। इस विक्रय से ईरानी चाँदी की पर्याप्त मात्रा उत्पन्न हुई होगी, जिसमें से अधिकांश सूरत टकसाल में लाई गई थी (स्टीफन फ्रेडरिक डेल, *इंडियन मर्चेंटस एंड यूरेशियन ट्रेडर्स 1600–1750*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 1994)। सूरत–मोचा व्यापार में बाहरी यात्रा में अधिकांश रूप से गुजरात के वस्त्र और आने वाली यात्रा में बहुमूल्य धातुएँ शामिल थीं।

बंगाल से व्यापार मार्ग श्रीलंका, मालाबार और मालदीव तक जाते थे। इन सभी क्षेत्रों को बंगाल से वस्त्र और खाद्य पदार्थों का निर्यात किया जाता था, और सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में मालदीव को चावल का निर्यात वास्तव में बंगाल व्यापार की विशेषताओं में से एक था। बदले में, बंगाल ने श्रीलंका की दालचीनी और सुपारी, मालाबार की काली मिर्च और मालदीव के कौड़ियों का आयात किया। बंगाल में, ये कौड़ियाँ छोटे लेन देन में विनिमय के माध्यम के रूप में कार्य करती थीं और इस अवधि में चाँदी के टके की तुलना में कम मूल्य की गढ़ी हुए मुद्रा की अनुपस्थिति में विशेषरूप से महत्वपूर्ण थी। दक्षिण पूर्व एशिया के लिए व्यापार कोरोमंडल के लम्बी दूरी के व्यापार, विशेषकर दक्षिण कोरोमंडल के बन्दरगाहों से प्रमुख था। सदी के मध्य दशकों तक यह व्यापार अच्छी तरह से स्थापित था। यह दक्षिण दिशा की और बढ़ रहा था, पलयाकर से दूर, और देवानमपटनम, पांडिचेरी, कुडडालौर, पोर्तोनोवो और नगोर की दिशा में बढ़ रहा था और इसने गिरावट प्रदर्शित की। कोरोमंडल वस्त्रों ने आचेह, मेलाका, मकासर और बैटंम के पहले से ही स्थापित व्यापार केन्द्रों के माध्यम से और इनसे सुमात्रा, जावा, मोलुकास और मलय प्रायद्वीप के आंतरिक बाजारों तक, दक्षिण पूर्व एशियाई बाजारों में अन्दर तक प्रवेश किया।

कोरोमंडल तट और इंडोनेशियाई द्वीप समूह के बीच व्यापार विभिन्न वस्तुओं, मुख्य रूप से काली मिर्च के बदले भारतीय वस्तुओं के साथ वस्तु विनिमय व्यापार पर आधारित था। मौलुकास के उत्कृष्ट मसालों के अलावा दक्षिण पूर्व एशियाई काली मिर्च भी यूरोप के साथ कम्पनियों के व्यापार में मुख्य निर्यात की वस्तु थी। चूंकि इंडोनेशियाई द्वीप समूह में आमतौर पर चाँदी के भुगतान से मसाले प्राप्त नहीं किये जा सकते थे, इसलिए कोरोमंडल तट पर खरीददारी की तीव्र वृद्धि में भारतीय वस्त्रों का प्रभावशाली प्रभुत्व स्पष्ट रूप से जाहिर होता है। कोरोमंडल और दक्षिण पूर्व एशिया के बीच व्यापार का स्वरूप वस्त्र और काली मिर्च की अन्तर्निर्भरता द्वारा निर्धारित होता था।

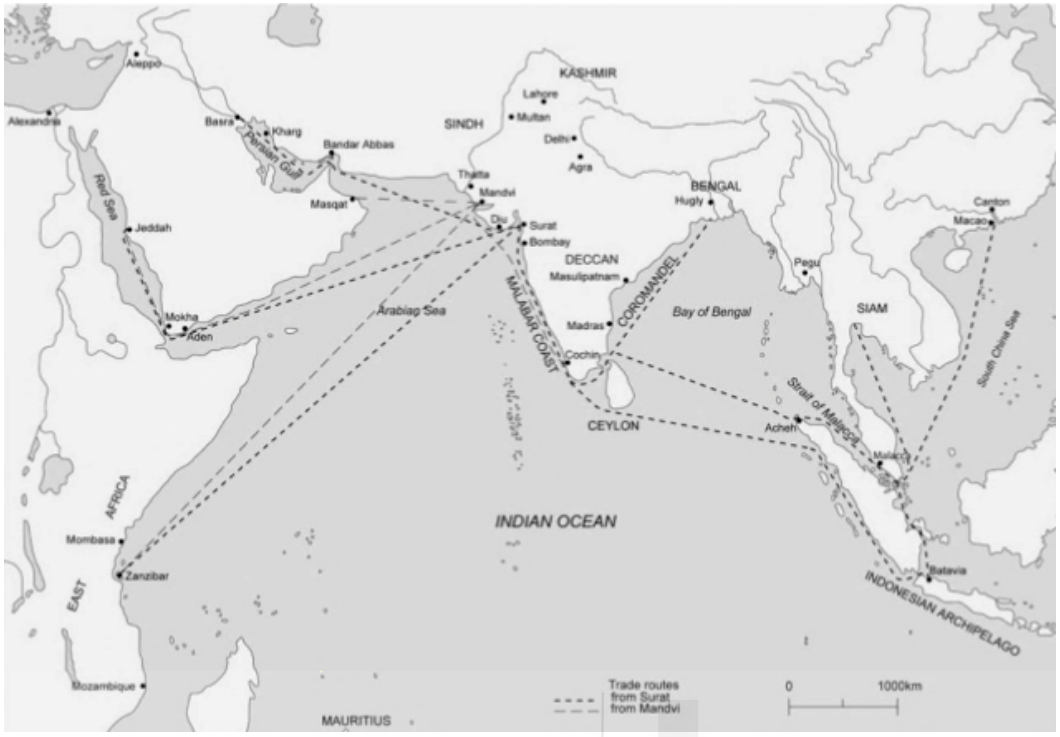

चित्रः हिन्द महासागर व्यापारिक संजाल

साभार–स्रोतः Ghulam Nadri, *Eighteenth Century Gujarat, The Dynamics of its Political Economy, 1750-1800,* Brill, Leiden, 2009

कोरोमंडल वस्तुओं के निर्यात के लिए विकास का एक क्षेत्र दक्षिण पूर्व एशिया की मुख्य भूमि के राज्य थेः अरक्कन, पेगु, तेनासेरिंम, अयुथ्या। सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में बर्मा और स्यिाम् देश के बन्दरगाहों मरौक–यु, सिरयाम, मेरगुई, तवोय, तेनासेरिंम और अयुध्या के लिए व्यापार का विस्तार हुआ। कोरोमंडल वस्त्र उत्पादकों ने विभिन्न क्षेत्रों की विशेष अभिरुचि के अनुरूप वस्तुओं का विनिर्माण करते हुए, दक्षिण–पूर्व एशियाई बाजारों के लिए स्वयं को तैयार किया था। सबसे अधिक निर्यात कपास के रेशों से मोटी बुनाई के वस्त्र थे, जिन्हें समाज के गरीब वर्गों द्वारा सस्ते कपड़ों के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता था। जब इन्हें चमकीले रंगों में रंगा गया और इनसे पुरूषों और महिलाओं द्वारा पहनने के उपयुक्त कपड़े बनाये गये, तो दक्षिण–पूर्व एशिया में इनकी तीव्र माँग हो गयी। अधिक समृद्ध लोगों की अभिरुचि के अनुरूप छपाई वाले सूती कपड़े थे जिन्हें छींट कहा जाता था, जिसमें रमणीय पुष्प संबंधी और ज्यामितिय डिजायन थे और मलमल की बारीक किस्में थीं, जिनमें कोरोमंडल के निर्यात ने गुजरात और बंगाल के निर्यातों के साथ प्रतिस्पर्धा थी। इस समय तक, दक्षिण–पूर्व एशियाई क्षेत्रीय भौगोलिक नाम वाले वस्त्रों की किस्मों ने गाँव तक में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई थी और व्यापार में हर कोई दक्षिण–पूर्व एशिया के विभिन्न भागों की माँगों से परिचित था। चावल को पर्याप्त मात्रा में अचेह और सुमात्रा के बन्दरगाहों और मेलाका और मलय बन्दरगाहों तक ले जाया जाता था। सेलम जिला और दक्कन से निर्मित स्टील का निर्यात मध्यम मात्रा में किया जाता था। नील, चमड़ा, रॉकफिश की खाल का व्यापार निर्यात होने वाली अन्य वस्तुओं में शामिल था। कभी–कभी दासों का व्यापार होता था, जिन्हें सीधे कोरोमंडल से लिया जाता था या बर्मा और अरक्कन से पुनःनिर्यात किया जाता था। दक्षिण–पूर्व एशिया से कोरोमंडल को आने वाले आयात समान विविध थे। काली मिर्च और मसालों का आयात किया जाता था। दक्षिण कोरोमंडल में मसाले भारी मात्रा में नहीं बेचे जाते थे, जितना कि वे गोलकुंडा में बेचे

जाते थे। टिन एक आकर्षक आयात था और पूरे क्षेत्र में इसकी बहुत माँग थी। इसी तरह तांबा भी था, जो डच लोगों द्वारा जापान से सीधे आयात शुरू करने से पहले बर्मा और सियाम् से लाया जाता था। हाथी और घोड़े लाए जाते थे। दक्षिण–पूर्व एशियाई वनों से सुगन्धित लकड़िया जैसे चन्दन, विभिन्न रंजक और गोंदों की भारतीय विनिर्माण में अनेक उपयोग थे और उनकी बहुत माँग थी।

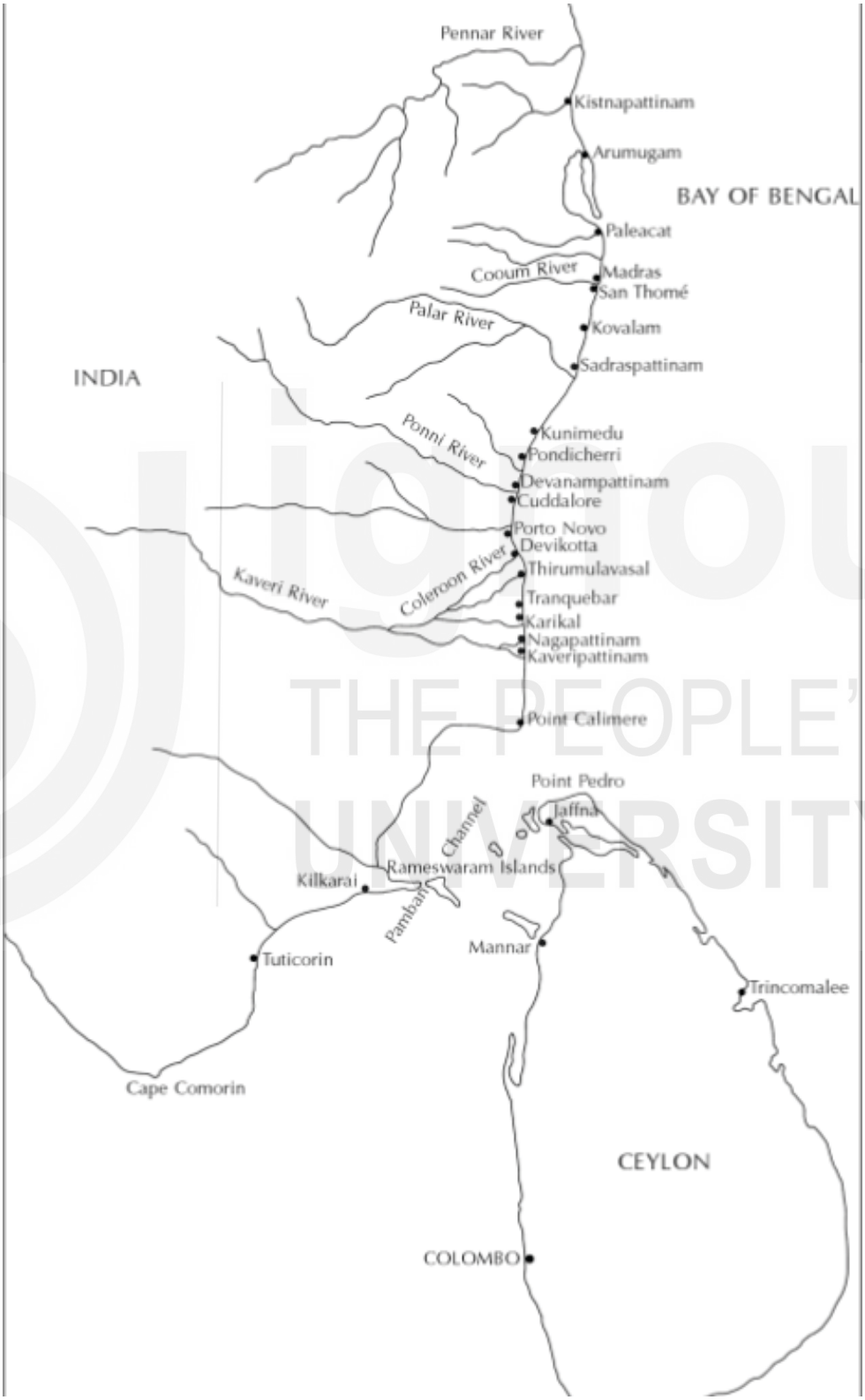

चित्रः कोरोमंडल तट के बन्दरगाह

साभार–स्रोत: Radhika Seshan, *Trade and Politics on the Coromandel Coast 17th and Early 18th centuries*, Primus, New Delhi, 2012, p. 9

चित्रः मुगल गुजरात

साभार–स्रोतः Ghulam Nadri, *Eighteenth Century Gujarat, The Dynamics of its Political Economy, 1750-1800,* Brill, Leiden, 2009

8.3 यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियाँ

सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी के दौरान हिन्द महासागर के अनेक व्यापारिक केन्द्र यूरोपीय नियन्त्रण में आ गये। पुर्तगाली, डच, अग्रेंजी और फ्रांसिसियों ने एक दूसरे की सर्वोच्यता को चुनौती दी और इसके परिणामस्वरूप विभिन्न बन्दरगाह शहरों के नियंत्रण में बदलाव आया। लेकिन मुख्य चुनौतियाँ तब आई, जब इन राष्ट्र–राज्यों (डच, फ्रांसीसी और अंग्रेजी) ने सत्रहवीं शताब्दी की शुरुआत में अपने व्यापारियों को चार्टर्ड कम्पनियों में संगठित किया, ताकि सोलहवीं शताब्दी से चले आ रहे पुर्तगालियों के प्रभुत्व वाले राजसी एकाधिकार का मुकाबला किया जा सके। (आप **बी एच आई सी 107 की इकाई 13** में पहले ही इसका विवरण पढ़ चुके हैं)।

1600 में सबसे पहले अंग्रेजी संयुक्त पूंजी कम्पनी, ईस्ट इंडिया कम्पनी (ई आई सी) आई थी। इसके दो साल बाद डच ईस्ट इंडिया कम्पनी, वेरेनिगडे ऑस्टिनडिश कोम्पैनी (वी ओ सी) आई। नीदरलैंड की प्रस्फुटित पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को ध्यान में रखते हुए वी ओ सी को व्यापार और मुनाफा कमाने के लिए संगठित किया गया था। यह ई आई सी से भी अधिक आक्रामक थी और इसने हिन्द महासागर में पुर्तगालियों को चुनौती देने की पहल की। इन दोनों कम्पनियों ने जिन मुख्य उत्पादों का कारोबार किया, उनमें वस्त्र और मसाले थे। इन

कम्पनियों ने भले ही व्यापारिक उद्यमी के रूप में शुरुआत की हो, लेकिन अन्त में, वे और भी बहुत कुछ तलाश रही थीं। वे साम्राज्य निर्माता बन गई और उनके लक्ष्य नितान्त व्यापार से आगे बढ़ने लगे। अंग्रेजी ईस्ट कंपनी ज्यादातर वस्त्रों और कपड़ों का कारोबार करती थी। इसी बीच में, डच ईस्ट इंडिया कम्पनी बड़े पैमाने पर मसाले के व्यापार में संलग्न थी। दोनों ने व्यापार के प्रत्येक पहलू में अपने लिए एक छोटा सा विशिष्ट स्थान बनाया। हालाँकि, इसने अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी को डच मसाला व्यापार में घुसपैठ करने की कोशिश करने से नहीं रोका। सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के दौरान कुल आयात के 95 प्रतिशत और 84 प्रतिशत के साथ, भारत अंग्रेजी कम्पनी के व्यापार के लिए प्रमुख केन्द्र था। सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कच्चे रेशम, वस्त्र और चाय की हिस्सेदारी में वृद्धि हुई।

8.3.1 पुर्तगाली

पुर्तगाली वाणिज्य प्रणाली लुसीतानियों के लिए एकाधिकार व्यापार और एशियाई लोगों के लिए लाइसेंस आधारित (कार्टज आधारित) व्यापार की पद्धति पर बहुत अधिक निर्भर थी। कार्टेज या पास का उपयोग न केवल पुर्तगाली ताज के लिए आरक्षित वस्तुओं के परिवहन को, विशेष रूप से मसालों के परिवहन का तुर्क और एबीसिनियन मुसलमानों के लिए प्रतिबंधित करने के लिए किया जाता था, बल्कि इसके द्वारा भारतीय व्यापारियों को एक या एक से अधिक पुर्तगाली बन्दरगाहों पर शुल्क का भुगतान करना होता था। सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी के दौरान 'भारत से भारत के साथ व्यापार' या एशिया के भीतर व्यापार एशिया में पुर्तगाली व्यापार, का एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटक था। अलफोंसीडी अल्बुकर्क के समय से पुर्तगालियों का अर्न्तएशियाई व्यापार गोवा ओर लिस्बन के बीच के व्यापार से अधिक महत्वपूर्ण था। (ओमप्रकाश, *यूरोपीयन कमर्शियल एन्टरप्राइज, द न्यू केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया*, वाल्यूम 5, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, 1998, पृष्ठ 49)।

पुर्तगालियों ने होरमुज और सिन्ध से दीव ले जाए जाने वाले प्रत्येक घोड़े पर ब्यालीस बारदौस की माँग की। सीमा शुल्क और घोड़ों के व्यापार ने इसे पुर्तगालियों के लिए काफी लाभप्रद केन्द्र बना दिया। मस्कट का बहुत कम राजस्व, आंशिक रूप से सर्राफा में, आंशिक रूप से घोड़ों, खजूरों और फलों के रूप में, दीव और चौल में पहुँचता था। समुद्र में तनाव के कारण, पुर्तगाली प्रशासन व्यापारियों के जहाजों की सुरक्षा में सिन्ध और दीव ले जाने के लिए सालाना दो से तीन युद्ध पोत या फ्रिगेट भेजता था। हालाँकि मस्कट का सीमा शुल्क मूल रूप से बसरा और भारत के पश्चिम तट के बीच व्यापार पर निर्भर था। मस्कट को खो देने के साथ, खाड़ी के लिए पुर्तगाली नौ परिवहन काफी संख्या में कम हो गया था।

इस आकर्षक व्यापार का लाभ अक्सर पुर्तगाली ताज के बजाए निजी व्यापारियों को जाता था। दीव के निजी पुर्तगाली व्यापारी लम्बे समय तक खाड़ी और होरमुज के साथ व्यापार में सक्रिय थे। 1630 में गोवा में पुर्तगाली देश के व्यापारियों ने उस व्यापार में 28 लाख 50 हजार जेराफिन का निवेश किया, यह निवेश उसी वर्ष भारत से लिस्बन के पुर्तगाली निर्यात के मूल्य का पंद्रह गुना था। (जॉर्ज ब्राएन सुजा, *पोर्चुगीज, डच एंड चाइनिज इन मेरिटाइन एशिया, सी. 1585–1800*, ऐशगेट वेरीयोरम, सरी, 2014, पृष्ठ 121)। 1580 और 1640 के बीच, निजी पोतभार की मात्रा और मूल्य 1580–1640 की अवधि में एशिया से आयात किये गये व्यापार के कुल मूल्य का लगभग 90 प्रतिशत था। भले ही निजी व्यापार की मात्रा को बढ़ा चढ़ा कर पेश किया गया हो, लेकिन व्यापार की मात्रा काफी अधिक थी। पुर्तगाली मौजूदा व्यापारिक संजाल का हिस्सा बन गये और उन्होंने मौजूदा व्यापारिक संजाल को परिवर्तित किया।

पुर्तगालियों के अन्तर–एशियाई व्यापार के महत्वपूर्ण नवाचारों में से एक गोवा और नागासाकी के बीच लम्बी दूरी के व्यापार का खोला जाना और एकाधिकार की शुरुआत थी जिसे अक्सर सख्ती से लागू नहीं किया जाता था। पश्चिम अफ्रीका के साथ दीव और दमन का वस्त्र व्यापार भारत में पुर्तगाली साम्राज्य का आधार बन गया। हालांकि समय के साथ हिन्द महासागर क्षेत्र में पुर्तगालियों का वर्चस्व कम हो गया, फिर भी बन्दरगाह शहर फलते–फूलते व्यापारिक केन्द्र बने रहे। पुर्तगालियों ने पुर्तगाली ताज के लिए दीव और दमन के आर्थिक महत्व को महसूस किया। इसका प्रभाव पुर्तगाली नीति–निर्माण पर पड़ा, व्यापारिक जिसने सत्रहवीं शताब्दी के बाद से उदार व्यापारिक नीतियों को प्रोत्साहन देना शुरू किया। चुनौतियों का सामना करने के लिए दीव और दमन के व्यापारियों ने व्यापारिक संजाल में नये व्यापार मार्गों को बनाने और व्यापारिक वस्तुओं के विविधिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। डच और अंग्रेजी प्रतिस्पर्धा में वृद्धि और एशिया में पुर्तगाली शक्ति के पतन के साथ, पुर्तगाली अधिकारियों के निजी व्यापार भारतीय संजाल और व्यापार के देशी संजाल पर अधिकाधिक निर्भर होने लगे।

8.3.2 अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी

अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना 1600 में एक संयुक्त पूंजी कम्पनी के रूप में हुई थी जिसका ईस्टइंडीज के साथ व्यापार पर एकाधिकार था और जिसकी गारंटी सम्राट द्वारा दी गई थी। यह एक संयुक्त पूंजी कम्पनी के रूप में शुरू हुई जिसने व्यापार पर ध्यान केन्द्रित किया क्योंकि अंग्रेजों को अधिक सामग्री और संसाधनों की आवश्यकता थी। अंग्रेजी निजी व्यापारियों में दो समूह शामिल थेः अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी के सेवक और भारत में बसे व्यापारी। उनका व्यापार भारत के सामुद्रिक व्यापार के पश्चिमी और पूर्वी दोनों क्षेत्रों में था और भारत के पश्चिमी तट में बन्दरगाहों के अलावा लाल सागर और फारस की खाड़ी क्षेत्रों तक फैला हुआ था। अंग्रेजी निजी जहाजरानी शायद गुजराती व्यापार के लिये ज्यादा हानिकारक थी। जबकि अठारहवीं शताब्दी की शुरुआत में सूरत से बंगाल जाने वाले जहाजों की संख्या लगभग 50 थी, लेकिन 1730 के दशक तक यह घट कर नहीं के बराबर हो गई। यह अनुमान लगाया गया है कि सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में गुजराती जहाजी बेड़े की कुल संख्या सौ से अधिक थी, जिनमें से आमतौर पर दो मुगलों के थे, जबकि सूरत के महान व्यापारी, मुल्ला अब्दुल गोफुर, अकेले सत्रह जहाज़ के मालिक थे। यह 1760 के दशक के आसपास था कि पश्चिमी हिन्द महासागर में व्यापार की जगह पर पूर्व के व्यापार में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई थी जिसे होल्डन फरबर द्वारा 'व्यापारिक क्रांति' के रूप में वर्णित किया गया था। कभी–कभी अंग्रेज अपनी सुमात्रा की फैक्ट्रियों के माध्यम से मद्रास में मसाले लाते थे और जब ऐसा हुआ तो डच मसालों की बिक्री पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। अंग्रेज कभी–कभी मालाबार और इन्डोनेशियाई दालचीनी लाने में सक्षम थे, लेकिन इस दालचीनी की गुणवत्ता डच की श्रीलंका की दालचीनी से इतने निम्न स्तर की थी कि इसने डच विक्रय पर कोई प्रभाव नहीं छोड़ा।

8.3.3 डच ईस्ट इंडिया कम्पनी, वेरेनिगडे ऑस्टिनडिश कोम्पैनी (वी ओ सी)

डच भारतीय व्यापार के तरीकों के सबसे अधिक जानकार थे और भारतीय बाजार में सिद्धहस्त थे। डच ईस्ट इंडिया कम्पनी 1602 में कई कम्पनियों के विलय से बनाई गई थी, जिसने कम्पनियों को एक–दूसरे के खिलाफ प्रतिस्पर्धा करने की बजाए एक के साथ मिलकर

कार्य करने की शुरुआत की, उसका भारतीय देसी शासकों और उनके अधिकारियों पर कुछ प्रभाव था। अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में बहुत प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद उसकी शक्ति बनाए रखने में इन वजहों ने योगदान दिया। सत्रहवीं शताब्दी की शुरुआत में पूर्वी एशिया के सभी जलमार्गों पर पुर्तगाली एकाधिकार को डच और अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनियों द्वारा सफल चुनौती दिये जाने के कारण यूरो–एशियाई व्यापार के परिमाण और मूल्य में वृद्धि हुई। व्यापार की वस्तुओं में भी एक बड़ा बदलाव आया। काली मिर्च और अन्य मसालों का, मसालों के कुल आयात में भारी अनुपात था, लेकिन उन्हें व्यापार की प्रमुख वस्तुओं के रूप में वस्त्र और कच्चे रेशम द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया था। डच ईस्ट इंडिया कम्पनी (वी ओ सी) के अन्तर–एशियाई व्यापार में भारतीय वस्त्र सबसे महत्वपूर्ण वस्तु बन गये। मसालों में डच का वास्तविक एकाधिकार था और उसमें मुनाफा अत्यधिक था। हर साल एक निश्चित मात्रा में उन्हें बेचा जाता था। मसालों की कीमतें बहुत सख्ती से तय की गई ताकि प्रतिद्वन्द्वियों के लिए मसाले खरीदना और उन्हें अन्य जगहों पर जहाँ डचों की फैक्ट्रियाँ थीं, बेचना लाभदायक न हो। डच कीमतें तय कर सकते थे और इन मसालों की एक निश्चित मात्रा बेच सकते थे। लेकिन अगर कीमतें बहुत अधिक तय की गई तो इसका बिक्री पर असर पड़ा। यह पाया गया कि 1697 में तय की गई कीमतें बहुत अधिक थीं और दालचीनी और लौंग की कीमतों में कटौती की गई। डच लोगों द्वारा श्रीलंका में दालचीनी निजी व्यापारियों को नहीं बेची जाती थी, बल्कि केवल कोरोमंडल की फैक्ट्रियों में बेची जाती थी। कुल निर्यात में बहुमूल्य धातुओं का दबदबा रहा। डच कम्पनी के मामले में, निर्यात की गई वस्तुओं में ऊनी, रेशम और लीडेन में विनिर्मित अन्य वस्त्र और गैर–कीमती धातु, और शराब, मदिरा आदि थे। भारत मुख्य रूप से एशिया के भीतर और साथ ही साथ एशिया और यूरोप के बीच होने वाले वी ओ सी के व्यापार में शामिल था। शौरा (साल्टपीटर), नील और अफीम जैसी वस्तुएँ भारत से प्राप्त की जाती थी। भारतीय व्यापार का प्रमुख महत्व एशियाई और यूरोपीय बाजारों के लिए वस्त्रों और कच्चे रेशम की आपूर्ति में था।

8.3.4 फ्रांसीसी ईस्ट इंडिया कम्पनी

फ्रांसीसी, जो एशियाई व्यापार में सामुद्रिक उद्यम के क्षेत्र में देर से आए थे, उन्होंने हिन्द महासागर के व्यापार में अपने दावों को पेश करने के लिए कड़ा प्रयास किया। इसने उन्हें स्थानीय राजनैतिक अधिकारियों के साथ–साथ व्यापारी समूहों के साथ दीर्घकालिक बातचीत में शामिल किया, जो हर वक्त सौहार्दपूर्ण या प्रभावी नहीं थी। फ्रांसीसी व्यापार सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में प्रभावी होने लगा था। 1699 में उनको पाँडिचेरी के वापस मिलने और गर्वनर फ्रेकोइस मार्टिन (1699–1706) के बुद्धिमान प्रबन्धन ने लाभदायक व्यापार और निवेश का मार्ग प्रशस्त किया। अंग्रेजों और डच लोगों के समतुल्य आर्डर 1710 के बाद से उन्हें मिलने शुरू हो गये थे, हालांकि वे नियमित नहीं थे और यूरोप से जहाजों और पूंजी के आगमन पर निर्भर थे। डेनिश कम्पनी का ट्रेक्यूबार में अपना किला और फैक्ट्री थी, जो उन बाजारों को विचलित करने के लिए पर्याप्त थी जो आमतौर पर नागपट्टनम को पोषित करते थे।

बोध प्रश्न 1

1) हिन्द महासागर में व्यापारिक संजाल पर एक टिप्पणी लिखिये।

.....

.....

.....

.....

2) हिन्द महासागर में पुर्तगाली व्यापार प्रथाओं के स्वरूप की जाँच कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3) सत्रहवीं शताब्दी में यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों द्वारा किये जाने वाले व्यापार के स्वरूप की संक्षेप में चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

8.4 सत्रहवीं शताब्दी में व्यापारिक संजाल में बदलाव

पूर्व से संपदा के प्रवाह का मतलब पुर्तगालियों के लिए आर्थिक विकास नहीं था, बल्कि समाज के एक विशेष वर्ग की शक्ति और संपदा में वृद्धि ही थी। निरंतर युद्धों के परिणामस्वरूप और उच्च स्तर के भ्रष्टाचार के कारण, भारत में पुर्तगालियों का कोष खाली था। पुर्तगालियों ने वास्तविक व्यापार के बजाए सीमा शुल्क संग्रह का सहारा लेकर राजकोषीय संकट को दूर करने की कोशिश की। पश्चिमी तट पर, जबकि गोवा जैसे पुर्तगाली गढों में गिरावट आई, वही सूरत समृद्ध हुआ। 1627 में राजा को सौपीं गई एक रिपोर्ट में स्पष्ट किया गया था कि गोवा के सीमा शुल्क से होने वाला राजस्व एक दशक पहले की तुलना में आधा था और इसके परिणामस्वरूप जो पहले खाते में पर्याप्त अधिशेष था, वह अब घाटे में बदल चुका था। गुजराती वस्तुएँ ज्यादातर पुर्तगाली कार्टेज के संरक्षण में पुर्तगाली जहाजों में ले जाई जाती थी, लेकिन पुर्तगाली नौसैनिक श्रेष्ठता में गिरावट के साथ, डच और अंग्रेजों के बार–बार होने वाले हमलों के कारण, व्यापारियों को हालाँकि अभी भी कार्टेज का सहारा लेना पड़ता था, परन्तु पुर्तगालियों द्वारा उन्हें आवश्यक सुरक्षा नहीं दी पा रही थी, जिसके कारण भारतीय व्यापारियों को डच और अंग्रेजों की सुरक्षा लेने के लिए अभियान चलाना पड़ा। व्यापारियों के एक मार्ग के नुकसान की क्षतिपूर्ति डच और अंग्रेजों के साथ नये मार्ग खोलकर की गई।

लाल सागर और फारस की खाड़ी के बीच गुजरात के सामुद्रिक संबंधों में गिरावट बढ़ती राजनैतिक असुरक्षा और अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मुगलों के पतन के साथ कानून व्यवस्था के टूटने के कारण आई। हालांकि गुजराती नौ परिवहन अपने चरम पर था, लेकिन गुजरात के निर्यात के बढ़े हुए परिमाण ने लाल सागर और हिन्द महासागर में अन्य स्थानों के बाजारों को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया था (अशिन दास गुप्ता, ''इंडिन मर्चेन्टस

एंड द ट्रेड इन द इंडियन ओसन'', *द कैम्ब्रिज इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया* भाग–1, सं. तपन रॉय चौधुरी व इरफान हबीब, ओरियन्ट लोंगमैन, हैदराबाद, पृष्ठ 433)। 1698 और 1710 के बीच लाल सागर और गुजरात के बीच की समुद्री यात्राऐं गुजरात के आंतरिक क्षेत्रों में राजनीतिक अस्थिरता और यमनी गृहयुद्ध की लागत को पूरा करने के लिए मोचा में गुजराती व्यापारियों से वसूली के कारण अक्सर हानिप्रद थी। फिर भी व्यापार के पारंपरिक संजाल के कारण भारत के पश्चिमी तट के साथ फारस की खाड़ी और लाल सागर के बीच व्यापार जीवित रहा, हालाँकि व्यापार की मात्रा में पर्याप्त गिरावट आई थी।

पुर्तगालियों और डच और अंग्रेजों के बीच व्यापारिक संबंधों का लेटिन अमेरिका से लेकर यूरोप और अफ्रीका तक के व्यापक राजनैतिक परिदृश्य के साथ गहरा संबंध था। पूर्व की स्थिति यूरोप की परिस्थितियों से भिन्न थी जहाँ बिट्रिश विदेशी व्यापार में पुर्तगाल का स्थान निर्धारक था। 1630 के दशक में डच के कारण पुर्तगाली व्यापारियों को विनाशकारी नुकसान उठाने पड़े। डच काली मिर्च के व्यापार और चाँदी के व्यापार को नियंत्रित करना चाहते थे, जो ज्यादातर पुर्तगालियों द्वारा किया जाता था। काली मिर्च की प्राप्ति के लिए गुजराती वस्त्र महत्वपूर्ण थे, और इसलिए गुजरात के सामुद्रिक व्यापार पर नियंत्रण डच के लिए महत्वपूर्ण था। वस्त्र व्यापार पर नियन्त्रण यूरोपीय शक्तियों के बीच विवाद के प्रमुख मुद्दों में से एक था।

8.5 यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियाँ और उपमहाद्वीप की राजनैतिक शक्तियाँ

बदलते राजनैतिक भाग्य के साथ व्यापारी और राज्य के संबंध बदलते रहते हैं। गोलकुंडा और बीजापुर के दो दक्कन राज्यों ने पूर्व की ओर कोरोमंडल तट तक विस्तार किया था। परिणामस्वरूप, कोरोमंडल तट और उसके आन्तरिक क्षेत्रों को नियंत्रित करने वाले गोलकुंडा सैन्य सेनापति की अगुआई में नई प्रशासनिक व्यवस्था स्थापित की गई थी। इसी तरह बीजापुर के सैन्य अधिकारियों ने कुडडालौर और पोंटोनोवो के दक्षिणी आंतरिक क्षेत्रों को प्रशासित किया। कुड्डालौर और पोंटोनोवो के आंतरिक क्षेत्रों में मराठा प्रशासन की उपस्थिति व्यापार को अस्थिर कर रही थी। कोरोमंडल के व्यापारियों को बदलती राजनैतिक व्यवस्था के साथ तालमेल बिठाना पड़ा। पहले उनमें से कुछ ने तट के साथ–साथ और बुनाई करने वाले और चावल उत्पादक गाँव शामिल थे। इन क्षेत्रों के नियंत्रण ने इन व्यापारियों को व्यापार की वस्तुओं तक विशेषाधिकार पहुँच और उत्पादन के पर्यवेक्षण करने की क्षमता प्रदान करके महत्वपूर्ण लाभ प्रदान किये थे। चुलिया मुस्लिम समुदाय के प्रमुख व्यापारियों के व्यावसायिक प्रारूप स्पष्ट रूप से भिन्न–भिन्न थे। वे किसी भी यूरोपीय बन्दरगाह में बसने के लिए आगे नहीं बढ़े, बल्कि अपने पारंपरिक जन्म स्थान के बन्दरगाह में बने रहे।

गोलकुंडा और मुगल शासक परिवारों के विपरीत, दक्षिणी शासक जहाजों के मालिक बनकर समुद्री यात्राएँ भेजकर विदेशी व्यापार में सीधे भाग नहीं लेते थे। इसका व्यापारियों पर विरोधीभासी प्रभाव पड़ा। एक ओर इसने व्यापार प्रक्रिया में प्रत्यक्ष राज्य के हस्तक्षेप को कम कर दिया। गोलकुंडा, और मुगल प्रांत गुजरात और बंगाल दोनों स्थानों में, विदेशी व्यापार में राज्य की भागीदारी की वजह से जहाज के मालिक शासक के लाभ के लिए महत्वपूर्ण क्षणों में बाजार की कार्यशैली में परिवर्तन कर देते थे। आंतरिक राजनैतिक परिवर्तनों ने एक ऐसी व्यवस्था को अस्त व्यस्त कर दिया, जिसके व्यापारी अभ्यस्त हो गये थे और जिससे वे

लोग लाभ प्राप्त कर रहे थे। शताब्दी के अन्तिम दशकों में परिवर्तन और तेज हो गये, जिससे व्यापारियों को उनके साथ समझौता करने के प्रयासों में तनाव झेलना पड़ा। हिन्द महासागर के व्यापार में यूरोपीय भागीदारी के रूप में गहरे बाहरी परिवर्तन से आए थे। इनमें से कुछ परिवर्तनों का लाभकारी प्रभाव पड़ा, तो कुछ अन्य ने उन पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। आंतरिक और बाह्य परिवर्तनों का संचयी प्रभाव कोरोमंडल व्यापारी की शांत दुनिया को हिला देने के रूप में हुआ और यह अठारहवीं शताब्दी में वाणिज्यिक संबंधों के पुनर्रेखन की ओर इंगित करता है।

8.6 यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियाँ और देशी व्यापारिक समूह

यूरोपीय और भारतीय व्यापारी वर्ग के बीच साझेदारी का अर्थ अक्सर मित्रता नहीं था। कई अवसरों पर यह एक तीक्ष्ण और निरंतर प्रतिस्पर्धा थी। यूरोपीय लोगों के वर्चस्व वाली संरचना के भीतर भारतीय व्यापारी एक अधीनस्थ कारक नहीं थे। भारतीय व्यापारियों को हमेशा केवल एक यूरोपीय कम्पनी से नहीं निपटना होता था, बल्कि उनके पुर्तगाली, अंग्रेजी और डच के साथ सामानांतर व्यापारिक संबंध होते थे। यह सूरत के पनपते मध्यस्थता शुल्क वाले व्यापार में विशेष रूप से प्रचलित था। डच और अंग्रेजों के उदय के बाद से भारतीय व्यापारियों की एशिया और यूरोप या पूर्वी बाजारों के बीच प्रत्यक्ष व्यापार में भागीदारी बढ़ी, जो पहले ज्यादातर पुर्तगालियों द्वारा नियंत्रित था। इस प्रकार यद्यपि यूरोपीय शक्तियों के बीच प्रतिस्पर्धा ने उनके मुनाफे कम कर दिये, लेकिन साथ ही साथ इसने नये मार्ग खोले और अनेक व्यापारी अक्सर एक बन्दरगाह शहर से दूसरे में हस्तांतरित हो गये।

व्यापारियों को, संजय सुब्रह्मण्यम् और सी ए बेली के शब्दों में एक वाणिज्यिक अभिजात वर्ग कहा जा सकता है, जिनके छोटे लोगों के साथ सांस्कृतिक और व्यापारिक संबंध थे, लेकिन पोर्टफोलियो पूंजीपतियों के विपरीत उनमें से बहुत कम का राजनैतिक झुकाव था और वे अपने वित्तीय लाभ के लिए राजनैतिक कृपादृष्टि पर निर्भर नहीं थे। इसके अलावा, व्यापारिक फर्म या घराने ज्यादातर पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी पूंजी और बाजार के प्रभाव का पुर्नउत्पादन करते हैं और आर्थिक या राजनीतिक अरक्षितता से आसानी से प्रभावित नहीं होते थे, जैसा कि पोर्टफोलियो पूंजीपूतियों के मामले में था। रूबी मालोनी ने बताया कि यूरोपीय संरक्षण ने नई तकनीकों, बाजार नीतियों, संस्थाओं और भाषा के परिचय के साथ–साथ शहरों के जीवन चक्र को प्रभावित किया, लेकिन देसी समूह अपनी पहचान बनाये रखने में सफल रहे।

8.7 हिन्द महासागर में व्यापार का बदलता स्वरूप

जैकब सी. वान लेऊर ने व्यापार के अप्रभावी तरीके के आधार पर एशियाई व्यापार को ''छोटे पैमाने का फेरी वाला व्यापार'' के रूप में वर्णित किया। उन्होंने तर्क दिया कि एशियाई व्यापारी एक फेरी वाला था और व्यापार अत्यधिक रूप से विलासिता की वस्तुओं में था। नील्स स्टीन्सगार्ड ने यह स्वीकार किया कि फेरी वाला व्यापार भी काफी परिष्कृत वाणिज्यिक तरीकों का उपयोग कर सकता है, जैसे ''साझेदारी, और विनिमय पत्रों के माध्यम से हस्तानांतरण लेन–देन, और संयुक्त साख'' जो अनिश्चित बाजार कीमतों पर आधारित था। उन्होंने कारवाँ के वाणिज्यिक संगठनों, यानि फेरी वाले व्यापार और यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों के वाणिज्यिक ढांचे की तुलना करने की कोशिश की और कारवाँ पर कम्पनियों की संगठनात्मक श्रेष्ठता का प्रदर्शन किया। नील्स स्टीन्सगार्ड ने इंगित किया कि सत्रहवीं

शताब्दी के बाद से यूरो एशियाई व्यापार के संगठन और संचालन में एक क्रांति लाने में डच और अंग्रेजी कम्पनियों की महत्वपूर्ण भूमिका थी। पुर्तगालियों के विपरीत डच और अंग्रेजों की सफलता सरकारी एकाधिकार या हिंसा के उपयोग पर नहीं बल्कि बाजारों में प्रतिस्पर्धा करने की उनकी क्षमता पर आधारित थी। हालांकि, ऐसे उदाहरण थे, जहाँ यह स्पष्ट है कि डच और अंग्रेजी कम्पनियों ने सरकारों पर एकाधिकार नियंत्रण हासिल करने के लिए व्यापक दबाव डाला।

अशिनदास गुप्ता ने तर्क दिया कि फेरी वाले की अवधारणा आवश्यक रूप से इस तथ्य के विरोध में नहीं थी कि हिन्द महासागर में सामुद्रिक मार्गों की यात्रा करने वाले अपने एक दो बंडल मोटे कपड़ों के साथ, छोटे व्यापारियों की प्रधानता के अलावा मुल्ला अब्दुल गफ्फूर जैसे धनी जहाज मालिक व्यापारियों ने भी हिन्द महासागर के व्यापार में भाग लिया। हालांकि, जैसा कि सुशील चौधरी बताते हैं कि विलासिता की वस्तुएं हिन्द महासागर के व्यापार की महत्वपूर्ण वस्तुएँ थीं और भारत का प्रमुख आयात सर्राफा था, लेकिन साथ ही दैनिक जीवन के उपयोग की सांसारिक वस्तुएँ वास्तव में व्यापार की प्रमुख वस्तुएँ थीं। वस्त्र निर्यात की प्रमुख वस्तुओं में से एक थे। उनमें से कुछ निस्संदेह मंहगे और महीन वस्त्र थे, लेकिन ज्यादातर बहुत सस्ते थे और निश्चित रूप से रोजमर्रा के पहनने वाले मोटे वस्त्र के थान थे। एक अन्य वस्तु जो निर्यात सूची में काफी प्रमुख रही वह चावल, गेहूँ, तेल, चीनी और अन्य वस्तुओं जैसे मुख्य खाद्य पदार्थ थे।

संयुक्त पूंजी कम्पनी और श्रेणी प्रणाली यूरोपीयों के साथ आये। दीव के बनियों की श्रेणी प्रणाली का मूर्त्त रूप 1689 में स्थापित कम्पैंहीया डॉस माजानेस था। कम्पैंहीया ने बनिया समुदाय के हितों की रक्षा करने और सौदेबाजी करने के लिए एक सामूहिक निकाय के रूप में काम किया। पारिवारिक संगठन और हिंद महासागर में लंबी दूरी के व्यापार के बीच घनिष्ट संबंध दर्शाते हैं कि कैसे सफल पूंजीवादी उद्यम नातेदारी पर आधारित सामाजिक संगठन से घनिष्टता से जुड़े हुए हैं। संजाल के पारिवारिक संबंधों के निर्माण में विवाह गठबंधनों ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अठारहवीं शताब्दी में दमन का हींग व्यापार इन्हीं पारंपरिक संजालों पर निर्भर था। हिन्द महासागर की इन विशेषताओं ने अक्सर पूंजी और वस्तु की उपलब्धता और वितरण को सुनिश्चित किया, और अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क बनाने में मदद की, और सांस्कृतिक रूप से भिन्न–भिन्न देशों में विदेशी व्यापारी के लिए आथित्य की व्यवस्था की। यह आमतौर कई पीढ़ियों के बीच हस्तांतरित किया जाता था और व्यापारी अपनी संपदा में विविधता लाने में सक्षम थे। भारत और चीन के बीच अफीम के व्यापार पर एकाधिकार स्थापित करने की अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी की कोशिशों की विफलता को देश में अफीम वितरक और व्यापारियों के संजाल की शक्ति और प्रभाव को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

वेबर ने पूंजीवाद के विकास के लिए हानिकारक पारम्परिक संबंधों की क्षमता की ओर संकेत किया था। हालांकि, घरेलू इकाईयों और व्यापक नातेदारी समूहों ने अक्सर हिन्द महासागर क्षेत्र और पश्चिम में भी वाणिज्यिक गतिविधियों में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यद्यपि अंग्रेजी और डच संयुक्त पूंजी कम्पनियां निदेशकों और शेयर धारकों द्वारा चलाई जाती थीं, यह भतीजों और मित्रों' के व्यक्तिगत संजाल पर भी निर्भर करती थी। हालांकि, भारतीय व्यापारियों ने अक्सर केवल धर्म या जाति के अनुसार नहीं, बल्कि व्यवसायिक नैतिकता के अनुसार लिखे गये शिष्टाचार और सामाजिक मानदंडों का अनुपालन किया। (आशिनदास

गुप्ता, ''सम एटीटयूडस अमोंग द 18जी सेन्चुरी मर्चेन्ट्स'', *द वर्ल्ड ऑफ द इंडियन ओशन मर्चेन्ट 1500–1800: कलेक्टेड़ एसेज ऑफ आशिनदास गुप्ता*, कम्पाइल्ड बाई उमादास गुप्ता, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2001, पृष्ठ 106)। भारतीय व्यापारियों और वणिकों के महत्वाकांक्षी और उद्यमी कौशल ने उन्हें चुनौतियों और तनावों का सामना करने के लिए अनुकूलित होने और अपनाने में मदद की।

बोध प्रश्न 2

1) सत्रहवीं शताब्दी में हिन्द महासागर में व्यापारिक संजाल में हुए बदलावों पर एक टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

2) यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों के प्रति भारतीय उपमहाद्वीप की राजनैतिक शक्तियों के रवैये की संक्षेप में चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

8.8 सारांश

हिन्द महासागर व्यापार जगत में भारत की खास भौगोलिक स्थिति ने प्राज्ञइतिहासिक काल से इसकी सामुद्रिक अर्थव्यवस्था में अभूतपूर्व वृद्धि में मदद की। मुगल भारत के व्यापारिक संजाल में परिवर्तन लाने में सहायक थे। वे स्थिरता लाए और उन्होंने आंतरिक क्षेत्रों और बन्दरगाहों के बीच एक सेतू का काम किया। हालांकि, मुगल स्थलीय शक्ति थे और सामुद्रिक मार्गों को ज्यादा महत्व नहीं देते थे। व्यापारी वर्ग अक्सर यूरोपीय लोगों के साथ गठनबंधन करता था, क्योंकि उन्हें एहसास हुआ कि भारतीय शासक उनकी खुले समुद्रों में सहायता प्रदान नहीं कर पायेंगें जो यूरोपीय लोग करेंगे। यूरोपीय और भारतीय व्यापारिक वर्ग के बीच संबंध अक्सर तीक्ष्ण और निरंतर प्रतिस्पर्धा वाले थे। देसी व्यापारियों और वणिकों ने क्षेत्र की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गुजराती देश की सबसे महत्वकांक्षी और उद्यमी आबादी में से एक थे। भारतीय व्यापारियों ने हिन्द महासागर में पुर्तगालियों के आने के साथ अपनी व्यापारिक गतिविधियों को रूपांतरित किया। पुर्तगालियों के साथ अपने सहयोग के कारण उन्हें बड़ी मात्रा में मुनाफे हुए और ये काफी हद तक आवर्धित हुए। उन्होंने बैकरों, दलालों और बाजार के देसी संजाल और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संजाल के बीच की कड़ी के रूप में कार्य किया। हालांकि, भारतीय व्यापारियों ने हमेशा एक यूरोपीय कम्पनी के साथ ही सौदा

नहीं किया, बल्कि पुर्तगाली, अंग्रेजी और डच के साथ एक साथ व्यापारिक संबंध देखें जा सकते हैं। डच और अंग्रेजों के उदय ने भारतीय व्यापारियों को एशिया और यूरोप या पूर्वी बाजारों के बीच प्रत्यक्ष व्यापार में भागीदारी की सुविधा प्रदान की, जो पहले ज्यादातर गोवा द्वारा नियंत्रित था। यूरोपीय लोगों के वर्चस्व वाले ढ़ांचे के भीतर भारतीय व्यापारी एक अधीनस्थ कारक नहीं थे।

8.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) भाग 8.2 देखें। व्यापार की वस्तुओं के रूप में कारीगर उत्पादों के साथ कृषि उत्पादन की विविधता पर भी प्रकाश डाला जाना चाहिए। हिन्द महासागरीय व्यापारिक संजाल में बंगाल की खाड़ी के साथ–साथ अरब सागर में व्यापार मार्ग शामिल होने चाहिए।

2) उपभाग 8.3.1 देखें। पुर्तगालियों के द्वारा व्यापार पर एकाधिकार स्थापित करने के प्रयास और सीमा शुल्क के आरोपण के बारे में विस्तार की आवश्यकता है।

3) भाग 8.3 देखें। उत्तर को सत्रहवीं शताब्दी पर केन्द्रित होना चाहिए, इसलिए अंग्रेजों की और डच ईस्ट इंडिया कम्पनी की भूमिका और उद्‌भव के बारे में विस्तार से देने की आवश्यकता है। पुर्तगालियों के साथ टकराव पर भी चर्चा होनी चाहिए।

बोध प्रश्न 2

1) भाग 8.4 देखें। पुर्तगालियों के विपरीत अंग्रेज और डचों ने हिन्द महासागर के भीतर व्यापारिक संजाल की जटिलता को समझने की कोशिश की और गंभीर घुसपैठ की। इसके बाद उन्होंने इसे यूरोपीय बाजारों की व्यापारिक आवश्यकताओं के साथ जोड़ा।

2) भाग 8.5 देखें। भारत में कृषि और कारीगर उत्पादों की प्रचुरता ने शासक अभिजात वर्ग को समुद्री व्यापारिक कम्पनियों के महत्व के बारे में लगभग बेखबर बना दिया, इस प्रकार उनकी उदासीनता प्रमुख प्रतिक्रिया थी।

इस इकाई के लिए कुछ उपयोगी अध्ययन सामग्री

Chandra, Satish. ed. 1987. *The Indian Ocean: Explorations in history, commerce, and politics.* New Delhi: Sage Publications.

Raychaudhuri, Tapan& Habib, Irfan. ed. 1982. *The Cambridge Economic History of India, Vol. I: c. 1200-1750*, London: Cambridge University Press.

Gupta, Ashin Das and M. N. Pearson, eds. 1987. *India and the Indian Ocean 1500-1800.* Delhi: Oxford University Press.

Jain, L. C. 1929. *Indigenous Banking in India, PLACE* London.

Mehta, Makrand. 1991. *Indian Merchants and Entrepreneurs in Historical Perspective,* Delhi: Publisher.

Subrahmanyam, Sanjay. ed. 1994. *Money and the Market in India 1100-1700.* Delhi: O.U.P.